सोने के हथियार से लडने के लिये

सोने के हथियार से लडने के लिये

हम किले पर रहते थे |
मजबूत दीवारों का अभेद्य किला
बुर्जों पर चौकली करते हुए
हमें कोई तनाव न था |
हमें दीखते थे सामने फैले
विस्तृत मैदान
और वहीं झाडियों में छिपा हमारा शत्रु
वे हमें क्योंकर जीत पाते ?
हमारे पास शस्त्र-अस्त्र थे भरपूर
हमारे सैनिक जाँबाज - शूर
और मैदान पार के रास्तों पर
निश्चित रुप से पास आ रही थीं
हमारे मित्र देशों की सेनाएँ |
पर हाँ ....
हमारे किले के कोने में एक छोटा मायावी द्वार था |
द्वारपाल ने एक दिन उसे खोल दिया |
शत्रु उसी रास्ते से आया |
बिना लडे ही हमपर जय किया |
शर्म की बात, पर सच्चाई की है |
सोने का हथियार
लोहे के हथियार पर भारी है |

किसी जमाने में पढी थी एडविन मूर की यह कविता The Castle | उसी का भावानुवाद मैंने किया
है, जो मुंबई पर हुए आतंकी हमले की घटना पर फिट है | 26/11 की रात यह कविता बारबार
चेतना में गूँजती रही |
क्रिकेट मॅच में हम जीत की कगार पर पहुँच चुके थे कि अचानक खबर आई कि मुंबई

रेल्वे स्टेशन -- सीएसटी (छत्रपती शिवाजी टर्मिनस) पर गोलाबारी हो रही है | मेरा निवास
मंत्रालय के ठीक सामने है | वहाँ से ताज की ओर जाती हुई गाडियों की सायरन सुनाई पडने लगी
| तभी टी. वी. स्क्रीनपर एटीएस चीफ हेमंत करकरे, सीएसटी स्टेशन पर पहुँच कर बुलेट प्रुफ
जाकिट पहनते दिखाई दिये | अपने जाँबाज पुलिस अफसर की इसी बात से सिपाहियों का मनोबल तत्काल दो-चार गुना बढा होगा | तब से लगातार आतंकी हमले की खबरें आती रही |
कामा अस्पताल में गोलीबारी, हॉटेल लियोपोल्ड पर गोलीबारी, फिर पार्ला के हायवे पर बम फटने की खबर, फिर मंत्रालय के आसपास गोलाबारी, चौपाटी पर आतंकवादियों से मुठभेड, एक आतंकवादी मारा गया और एक पकडा गया - ये सारी खबरें ऐसी थीं जिसमें संकट आ रहा
था और दसेक मिनटों में टल रहा था | मेरी दृष्टिसे वही महत्वपूर्ण था कि संकट टल रहा था |
लगा कि ऐसे ही ताज, ओबेराय और नरीमन हाऊस का संकट भी टल जायेगा - अगले दो घंटो
में या चार घंटों में | रातभर इसी अपेक्षा में टीवी के सामने गुजारी | कई मुंबईवासियों की वह रात
टीवी के सामने ही गुजरी होगी|
अगले तीन दिनों में आतंकवाद का भयानक चेहरा दिखा | उस पर सभी की भावनाएँ एक सी थीं | आक्रोश, क्रोध, हताशा, दुख, शहीदों के प्रति गहरी संवेदना व आदर, जख्मियों की देखभाल, उनके लिये रक्तदान, जानकारी का आदान-प्रदान | जन सामान्य इससे अधिक कर भी
क्या सकता था ? जो कुछ करना था केवल सरकारी यंत्रणा को ही करना था |
लेकिन अब जगह जगह थम कर लोग कह रहे हैं - यह परिस्थिती नही चलेगी | दूसरोंकी निष्क्रियता के कारण हमारी बली चढे यह हम नही सह सकते | हम नही कह सकते और न कहेंगे
कि हमारे हाथ में क्या है | हमें आगे आकर कुछ करना ही होगा |
लेकिन क्या करना है? उसके लिये लम्बे समय तक टटोलते ही न रह जायें - इसीलिये वह मूर की कविता याद आई | AK-47 का मुकाबला करना हो तो वह AK-47 से हो सकता

है | पर जब रिश्वत का सोने ही हथियार बन कर आ जाये तो उसका मुकाबला कैसे हो ?
जिस प्रकार आतंकियों ने मुंबई हमले की पूर्व तैयारी की, ताज में महीनों तक शेफ की
अप्रेंटिसशिप की, कोलकाता में उन्हें सिम कार्डस मुहैया कराये, सावधानी की सूचनाएँ
अनदेखी
रह गई - ये सब बातें ऊपरी सतह पर तो आलस और असावधानता, बेफिकिर और
उदासीनता
दर्शाती है लेकिन गहराई में देखो तो भ्रष्टता और रिश्वतखोरी के संकेत भी देती हैं |
अर्थात् हमें दोनों ही मुद्दों को सोचना है | असावधानता का भी और भ्रष्टाचार का भी |
सरकार की गुप्तचर यंत्रणआ में कई खामियाँ है - एक है तालमेल की कमी, दूसरी है
सर्वसमावेशकता का अभाव | समाज के हर तबके से गुप्तचर यंत्रणा के लिये खबरियों का
संगठन आवश्यक है | लोगों से सुझाव व सूचनाएँ पाने की, उनकी तुरंत फुरंत छानबीन
और
अमल की भी व्यवस्था हो, और इनकी मॉनिटरिंग भी एक सर्व समावेशक समिती द्वारा हो
जो
देखे कि सुझावों पर कारवाई किस जरह की गई | संक्षेप में यह कहना होगा की गुप्तचर
यंत्रणा के
सजग होने की बात को सजगता से परखने की भी यंत्रणा होनी चाहिये | आज यह
रिपोर्टिंग टॉप
बॉस तक सीमित रहती है और उसकी सजगता की कोई पडताल नही होती | इस यंत्रणा
में
लोकसहभाग की व्यवस्था नही रही तो आज की तरह हतबलता की भावना और उसके
चलते
क्रोध से उफान आनेवाले समय में तीव्रतर होता रहेगा |
जहाँ तक भ्रष्टाचार का सवाल है - लोगोंकी प्रखर राय है की राजकीय नेता और सरकारी
बाबू इसमें लिप्त है और दोनों के प्रति जनता का रोष है | अब फिर से सवाल उठाया गया
है कि
भ्रष्ट नेताओं के चुने जाने की जिम्मेदारी किसकी है ? क्या उन साठ प्रतिशत की जो
चुनाव में
वोट डालते हैं या उन चालीस प्रतिशत की जो वोट डाल नही जाते ?
पिछलें चुनाव में मैं भी उन चालीस प्रतिशत की पंक्ति में जा बैठी | क्यों कि उससे पहले
के चुनाव में मैंने मतपत्रिका पर ही कलम से लिख दिया था कि मुझे कोई उम्मीदवार
पसंद नही |

मैं जानती थी कि ऐसा करने से मेरी मतपत्रिका गिनती से बाहर हो जाती है | दुख इसी बात का है
| मेरे मत को गिनती के बाहर क्यों किया जाता है ?
आजकल एक ईमेल काफी घूम रही है | इसमें इलेक्शन रुल्स 1961 के सेक्शन 49-0 का हवाला देकर समझाया है कि आपको अपनी नापसंदगी का मत दर्ज कराने का अधिकार है
और चुनाव के दिन घर बैठने की अपेक्षा हमें जाकर अपनी नापसंदगी दर्ज करनी चाहिये | ईमेल
में इस सेक्शन का उल्लेख गलती से Constitution सेक्शन 49-0 किया गया है लेकिन यह ईमेल इतनी घूम चुकी है कि गूगल सर्च पर कॉन्स्टिट्युशन सेक्शन 49-0 लिखने से पूरी जानकारी, ईमेल, उसपर लोगों की प्रतिक्रिया इत्यादि सब कुछ पढा जा सकता है |
इस नियम को ध्याि से देखा जाय तो पता चलता है कि यह अपर्याप्त, कठिन और पुरातन
पड चुका नियम है जिसे व्यवहार्य और उपयोगी बनाने के लिये उसमें सुधार आवश्यक है |
प्रचलित नियम के अनुसार आपको यदि कोई उम्मीदवार पसंद न हो तो आप अपनी मतपत्रिका
प्रिसायडिंग अफसर क पास ले जाएंगे | वह उसे रख लेगा और कहीं से ढूँढकर आपको एक
Form No. 17 A देगा जिसपर - आपको अपना नाम, पता, पूरी जानकारी देनी है |
गोपनीयता का सवाल ही नही है | फिर उस पर लिखना है कि आप किसी उम्मीवार को मत नही
देना चाहते | प्रिसायडिंग ऑफिसर उस कागज को एक अलग लिफाफे में बंद कर रख देगा | बस
| मतगणना के समय उसकी कोई गिनती नही होगी |
अर्थात् आपके मत की कदर और कीमत है - जीरो | ऐसे नियम बनेंगे और पचासों साल चलते रहेंगे तो मतदाता भी कहेंगे कि - छोडो, क्या करना है वोट देकर |
अपने ही देश में, क्या मुझे यह कहने का हक नही होना चाहिये कि मुझे कोई उम्मीदवार पसंद नही ? लेकिन केवल फार्म नं. 17 भरने का अपर्याप्त हक अब नही चलेगा | मेरा यह मत
वोटिंगमशीन में दर्ज होना चाहिये, दर्ज करते समय उसकी गोपनीयता कायम रहनी चाहिये और

मतगणना के समय उसकी गिनती भी होनी चाहिये | तभी यह कहा जा सकता है कि मुझे अपना मत व्यक्त करने का अधिकार सही तौर पर मिला | वरना मुझे आर. के. लक्ष्मण का एक कार्टून याद आता है जिसमें एक "कॉमन मॅन" चुनावी बक्से में अपना मत डालते हुए बुदबुदाता है -"गुलाम को केवल यह चुनने का हक है कि उसका मास्टर कौन हो" | सही अर्थ में लोकशाही तभी उतरेगी - जब हरेक को अपना नापसंदगी दर्ज कराने का हक मिले | और यदि मतगणना में
पाया गया कि नापसंदगी को ही सबसे अधिक वोट पडे हैं तो उन सभी उम्मीदवारों को दुबारा खडे होने का मौका न दिया जाय | फिर हर उम्मीदवार सतर्क होगा कि उसे अधिक अच्छा काम करना है |
आज जिसे कोई उम्मीदवार पसंद न हो वह कुछ नहीं कहता - कुछ नही कह पाता - बस निष्क्रिय हो जाता है - निर्वीर्य, हतबल हो जाता है | ऐसे निष्क्रिय व्यक्तियों के मत सम्मान कोई उम्मीदवार क्यों करे या उनकी नापसंदगी से क्यों डरे ? ऐसी हालत में जनक्षोभ चाहे कितना ही क्यों न हो, उसकी तपिश उम्मेदवार या नेता को नही लगती |
और अब एक बार फिर चलें पैसे और भ्रष्टाचार के मुद्दे पर | पैसे देकर आज कोई भी बनावटी ड्रायव्हिंग लायसेन्स ले सकता है, रेशनकार्ड ले सकता है, बँक से क्रेडिट और डेबिट कार्ड ले सकता है, बैंक में बेनामी अकाऊंट खुलवा सकता है, बिना लायसेंस हथियार, बन्दूक या AK-47 रख सकता है, समुद्री मार्ग पर बिना रजिस्ट्रेशन के आवाजाही कर सकता है, ड्रग्ज और आरडीएक्स की खेपें ला सकता है | लेकिन मेरे विचार में इनसे भी भयावह तथ्य यह हैं कि
कोई उम्मीदवार चुनाव में लाखों-करोडों रुपये खर्च किये बगैर जीत नही सकता | जिसे लोग स्वयंस्फूर्ति से बिना खर्चे के जिता दें ऐसा उम्मीदवार हजारों में एकाध हीं निकलता है | बाकी सबको लाखें रुपये खर्च करने पडते हैं और जीतने के बाद यह लागत वसूलना ही सबसे पहली प्राथमिकता बन जाती है - उनके लिये अलग अलग भ्रष्ट रास्ते चुने जाते हैं ताकि लागत से कई गुनी अधिक वसूली भी हो सके | सारांश यह कि चुनाव लडना सत्ता में आना और सत्ता के
माध्यम से अकूत संपत्ति इकठ्ठा करना | यह सारा एक व्यापार बन जाता है | अमर सिंह के शब्दों
में "हाय रिस्क हाय गेन बिझिनेस | फिर बिझिनेस में समाज चिंतन या देश-चिंतन का मुद्दा
महत्वपूर्ण नही रह जाता | उसकी अहमियत केवल भोजन का स्वाद बढावाले चटनी पापड जितनी ही रह जाती है | लागत का पैसा मुकम्मल नफे समेत वसूलने के लिये सत्ता का खेला

शुरू हो जाता है और उसमें बाबूओं को भी घसीट लिया जाता है| कई बाबू भी इसमें खुशीखुशी शामिल होते हैं। इसीलिये जनता जब इस भ्रष्टता पर रुष्ट होती है तो नेताओं के साथ साथ प्रशासन के बाबूओं को भी दोषी मानती है |

मुंबई में जगह जगह जो जन क्षोभ व्यक्त हुआ उसमें यह चित्र साफ दीखता है | शेषन और उनके पश्चात् कई चुनाव आयुक्तों ने चुनाव प्रक्रिया में कई अच्छे सुधार किये | उम्मीदवारों के खर्चेपर पाबंदी लगाने, उनके खर्चे का लेखा जोखा रखने के कई उपाय किये गये |लेकिन वे अभी भी अपर्याप्त हैं | चुनावी उम्मीदवार जिनकी संपत्ति लाखों करोडों में है ऐसे लोगों के पिछले पंद्रह बीस वर्षों के इन्कम टॅक्स रिटर्न देखने का हक पब्लिक को मिलना चाहिये | खेती की आयपर भले ही टॅक्स न लगे लेकिन रिटर्न में उसपर ब्यौरा

लेना चाहिये | राजकीय पक्षों का इन्कम टॅक्स रिटर्न भरा जाना चाहिये और वह भी लोगों की जाँच के दायरे में आना चाहिये | ऐसे कई उपायों की आवश्यकता है जो लोकतंत्र की प्रक्रिया को अधिक पारदर्शी बनायें |

और यह सब करने के बावजूद भी यदि आतंकवादि या आर्थिक भ्रष्टाचार की अदालती सुनवाई वर्षों तक चलती रहे और किसीकों सजा न मिले तो क्या फायदा ?

मैंने कभी पढा कि जापानमें एक विचार-सभा हुई कि अदालती सुनवाई में देर लग जाती है - इसे और अधिक गतिमान बनाया जाय | फिर कई शिफारसें हुई ताकि औसत देरी को कम किया जा सके | उसे तीस दिनों से पंद्रह दिन पर लाया जा सके | फिर मुझे मौका लगा जापान जानेका - और वहाँ मुझे दिखाया गया उनका सुप्रीम कोर्ट - एक भव्य सुंदर इमारत | लेकिन बंद | मैंने पूछा यह बंद क्यों है ? उत्तर मिला - हमारी जनता को हमारी न्याय प्रणाली में इतना विश्वास है कि पिछले कई सालों से किसीने किसी फैसले के विरुध्द अपील करने की जरुरत ही नही समझी | मैंने पूछा - तो फिर इस इमारत को किसी दूसरे काम में क्यों नही लगाते ? उत्तर मिला - यदि देश का एक भी नागरिक कभी भी चाहे कि उसे अपील करनी है तो उसे यह भरोसा होना चाहिये कि देश में उसके अपील की सुनवाई की व्यवस्था है | यह इमारत उस भरोसे को बनाये रखने के लिये है |

जब इतनी मूलगामी सोच देखती हूँ तो सोचती हूँ कि हम कितने पीछे हैं | मुंबई पर आतंकवादी हमले की पृष्ठभूमि में ऐसे हजारों विचार हों - उन्हें क्रियान्वित किया जाय | वह विचार और कृति हमें आने वाले दिनों के लिये विरासत में चाहिये | संकट को मौका मानकर उससे कुछ न सीखा तो क्या सीखा ?

-------- लीना मेहेंदळे

13.12.2008